27 भारत में क्षेत्रवाद (Regionalism in India)

परिचय (Introduction)

इन्साइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज के अनुसार क्षेत्र भूतल का वह समरूपीय (Similar) भाग है जो अपनी भौतिक एवं सांस्कृतिक विशेषताओं के आधार पर पड़ोसी भू-भाग से पृथक होता है। राष्ट्रीय भू-भाग के रूप में एक क्षेत्र में अपनी प्रथाओं एवं आदर्शों के प्रति चेतना पायी जाती है जो एक क्षेत्र के सदस्यों को राष्ट्र के दूसरे भू-भागों में पृथक पहचान (Separate Identity) प्रदान करती है। इस आधार पर एक क्षेत्र की दो विशेषताएँ होती हैं:-

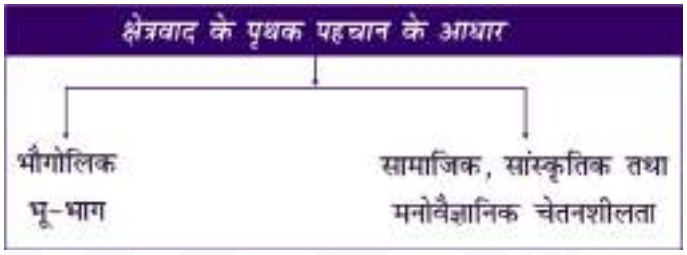

एक क्षेत्र विशेष के लोगों का कुछ सामान्य आधारों पर उस क्षेत्र के साथ लगाव की भावना ही क्षेत्रवाद है। जब यह भावना प्रबल हो जाती है तो व्यक्ति क्षेत्रीय हितों के समक्ष राष्ट्रीय हितों की उपेक्षा कर देता है और ऐसी स्थिति में क्षेत्रवाद एक समस्या का रूप धारण कर लेता है।

वर्तमान भारत में क्षेत्रवाद एक प्रमुख समस्या है जिसको राष्ट्रीय एकता (National Unity) के समक्ष एक चुनौती के रूप में देखा जा रहा है। हाल में महाराष्ट्र में अन्य राज्यों के छात्रों के प्रति उग्र व्यवहार और 'महाराष्ट्र मराठियों के लिए' का नारा तथा असम में अन्य राज्य के लोगों के प्रति किया गया बर्ताव या 'असम माता पहले भारत माता बाद में' जैसी क्षेत्रवादी गतिविधियाँ संप्रति (Present) राष्ट्रीयता के समक्ष एक प्रमुख खतरे को परिलक्षित करती हैं।

1. ***पृथक राष्ट्र की माँग के रूप में (As a demand for Separate Nation)***- यह क्षेत्रवाद का सबसे अधिक चुनौतीपूर्ण स्वरूप है। यह लोगों में कुछ प्रदेशों और क्षेत्रों को भारतीय संघ से अलग करने की माँग के रूप में उभरा है। ऐसी माँगे स्वतंत्रता के बाद शीघ्र ही उठने लगीं, परंतु अब वे कमजोर हो गयी हैं। 1963 के पूर्व तक द्रविडनाड गणतंत्र की स्थापना के लिए किया जाने वाला आंदोलन, जनरल फिजो के नेतृत्व में स्वतंत्र नागालैंड का आंदोलन, लालडेंगा के नेतृत्व में फिजो समझौता से पूर्व तक का मिजो आंदोलन, आजाद कश्मीर के लिए किया जाने वाला आंदोलन तथा खालिस्तान आंदोलन पृथक राष्ट्र की स्थापना के उद्देश्यों पर आधारित क्षेत्रीयता के उदाहरण हैं।

2. ***पृथक राज्य या क्षेत्रीय स्वायत्तता की माँग के रूप में (As a Demand for Separate States or Regional Autonomy)***– इस प्रकार का क्षेत्रवाद एक प्रदेश के किसी भाग की अस्मिता और विकास की भावना में निहित होता है। यह प्रदेश के एक भाग का दूसरे भाग पर शोषण व वंचन को भी दिखाता है। इस प्रकार क्षेत्रवाद का उद्भव मुख्यतः क्षेत्रीय विषमता व राजनीतिक सहभागिता (Political Participation) के अभाव आदि के कारण होता है।

केंद्रीकरण (Centralization) की प्रवृत्तियों से असंतुष्ट होने पर प्रांतों के द्वारा अपने आर्थिक एवं राजनीतिक हित में अधिक स्वायत्ता (Autonomy) दिए जाने की माँग समय-समय पर की जाती है। केंद्र के द्वारा इन माँगों को राष्ट्रीय एकता के लिए बाधक कहकर दबाए जाने की प्रवृत्ति क्षेत्रीय आंदोलन की स्थिति उत्पन्न करती है।

पृथक राज्य कायम करने की माँग को लेकर भारत में कई आंदोलन चलाए गए हैं एवं उनके परिणामस्वरूप बंबई का विभाजन करके गुजरात राज्य, पंजाब का विभाजन करके हरियाणा राज्य, असम का विभाजन करके मेघालय राज्य, उत्तर प्रदेश का विभाजन करके उत्तरांचल राज्य, मध्य प्रदेश का विभाजन करके छत्तीसगढ़ राज्य बनाए गए। अभी भी गोरखालैंड, बोडोलैंड आदि कई आंदोलन जारी हैं।

3. ***बाहरियों के विरोध के रूप में (As a Opposed to Out Siders)***– इस प्रकार के क्षेत्रवाद के उदाहरण असम में बाहरियों का विरोध, महाराष्ट्र में उत्तर प्रदेश, बिहार के लोगों का विरोध, झारखंड में दिकुओं के विरोध के रूप में देखा जा सकता है। इस तरह के क्षेत्रवाद का उद्भव स्थानीय

संसाधनों पर स्थानीय लोगों के एकाधिकार (Monopoly) की भावना के कारण होता है। क्षेत्रीय दलों (शिव सेना, एमएनएस, असमगण परिषद्) द्वारा राजनीतिक लाभ लेने हेतु ऐसे मुद्दों को हवा दी जाती है। क्षेत्रवाद के इस स्वरूप में बाहरी लोगों की हत्या (असम में बिहारी मजदूरों की हत्या) मारपीट (महाराष्ट्र में उत्तर प्रदेश एवं बिहार के परीक्षार्थियों के साथ मारपीट), धमकी आदि घटनाएँ देखी जाती हैं।

इस प्रकार के क्षेत्रवाद में भूमि पुत्र (सन ऑफ द स्वायल) की वैचारिकी कार्य करती है जो मुख्यत: आर्थिक असुरक्षा के कारण विकसित हुई है।

असम में सीमित नियोजन (रोजगार) के अवसरों पर पड़ोसी राज्य के प्रवासी बंगालियों एवं बिहारियों से उत्पन्न असुरक्षा के कारण असमी मूल के निवासियों ने आंतरिक उपनिवेशवाद (Colonialism) विरोधी उग्र क्षेत्रीय आंदोलन चलाया। झारखंड राज्य सरकार द्वारा जारी मूल स्थायी आवासी (डोमिसाइल) नीति के आधार पर नौकरियों में आरक्षण देने की नीति के परिणामस्वरूप उभरे आदिवासी समूहों एवं दिकू (बाहर से आकर झारखंड में बसे गैर आदिवासी) समूहों में संघर्ष का दौर इस श्रेणी की क्षेत्रीयता का तात्कालिक उदाहरण हैं।

4. अन्य माँगों के रूप में (As Other Demand) – भारत में क्षेत्रवाद के उपरोक्त वर्णित स्वरूपों के अतिरिक्त अन्य कई स्वरूप भी प्रचलित रहे हैं, जैसे–भाषा की मांग को लेकर, नदी जल बंटवारे, राज्य की सीमा विवाद संबंधी आदि।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत के राजभाषा के विषय को लेकर प्रमुख मतभेद उत्पन्न हुआ। संविधान में अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी को सरकारी कामकाज के लिए संघ की राजभाषा और प्रदेशों के बीच और एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश के बीच संप्रेषण (Communication) की भाषा बनाने की बात कही गई। राजभाषा से संबंधित निर्देश को लागू करने के प्रयत्न ने एकता के स्थान पर अधिक गहरी भाषाई प्रतिद्वंद्विता (Linguistic Rivalry) उत्पन्न कर दी। दक्षिण प्रदेशों में हिंदी का विरोध प्रबल राजनीतिक अभिव्यक्ति के रूप में देखा गया। इन प्रदेशों के अधिकांश लोगों के साथ–साथ पूर्वी भारत के गैर–हिंदी भाषी क्षेत्रों के लोगों ने भी हिंदी को थोपने का विरोध किया।

दक्षिण भारत में हिंदी के प्रति बढ़ते हुए विरोध को देखते हुए 1959 में जवाहरलाल नेहरू ने दक्षिण भारत के लोगों को यह आश्वासन दिया कि (क) उन पर हिंदी को नहीं थोपा जाएगा और (ख) अंग्रेजी को सहायक क्षेत्रीय भाषा के रूप में सरकारी उद्देश्यों के लिए तब तक प्रयोग में लाया जाएगा जब तक लोग इसे चाहेंगे। इसका निर्णय हिंदी भाषी लोगों की अपेक्षा गैर–हिंदी भाषी लोगों पर छोड़ दिया जाएगा।

भारत सरकार की राजभाषा नीति प्रस्ताव ने हिंदी, अंग्रेजी के साथ–साथ क्षेत्रीय भाषा को भी सरकारी मान्यता दे दी। नीति प्रस्ताव में यह संकेत दिए गए कि हिंदी के विकास के लिए उचित कदम उठाने चाहिए तथा अंग्रेजी को एक महत्त्वपूर्ण संबद्ध भाषा के रूप में जारी रखा जाए।

भारत में प्रदेश सीमाओं से संबंधित क्षेत्रवाद भी प्रचलित रहा है। इसमें एक या अधिक प्रदेशों की अस्मिताएँ (Identities) एक दूसरे को आच्छादित करने लगती हैं। इससे उनके हितों को खतरा भी पैदा हो जाता है। सामान्यत: नदी जल विवादों और दूसरे मुद्दों, विशेषतया महाराष्ट्र, कर्नाटक सीमा विवाद को इसके उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है।

क्षेत्रवाद का महत्त्व (Importance of Regionalism)

क्षेत्रवाद का महत्त्व केवल विघटनकारी शक्ति (Disruptive Power) के रूप में ही नहीं है, यह राष्ट्रीय एकीकरण का विरोधी मात्र नहीं है। क्षेत्रवाद एवं राष्ट्रीय एकीकरण दोनों सृजनात्मक (Creative) साझेदारी के रूप में रह सकते हैं और दोनों ही विकास के पक्ष में हैं। क्षेत्रवाद, क्षेत्र के विकास पर जोर देता है और राष्ट्रीय एकीकरण पूरे राष्ट्र के विकास के लिए जोर देता है। यदि हमें क्षेत्रवाद और राष्ट्रीय एकीकरण (National Integration) के अंतर्विरोधी मुद्दों का समाधान चाहिए तो देश की राजनीतिक प्रणाली को संघीय और प्रजातांत्रिक ही बने रहना आवश्यक है।

क्षेत्रवाद, राष्ट्रीय एकात्मकता का विघटन नहीं करता है। राष्ट्रीय, एकात्मकता के लिए महत्त्वपूर्ण शर्त है कि राष्ट्रवाद विभिन्न प्रकार की क्षेत्रीय उप–राष्ट्रीयताओं पर अपना नियंत्रण रख सके। दूसरे शब्दों में क्षेत्रवाद और राष्ट्रीयतावाद के बीच संतुलन होना आवश्यक है।

क्षेत्रवाद संघवाद को अधिक सफल बना सकता है। इस तरह से क्षेत्रीय अस्मिताओं की बढ़ोत्तरी समस्या नहीं बन पाएगी। यह स्वाभाविक है कि अपनी विशिष्ट संस्कृति के प्रति सचेत क्षेत्रीय समुदाय को संघीय सरकार के साथ अधिक समान साझेदारी के आधार पर व्यवहार करना चाहिए। इससे राष्ट्र में केंद्रीय प्रवृत्तियाँ कम होंगी और सत्ता केंद्र से प्रदेशों की तरफ परिवर्तित हो जाएगी।

वास्तव में किसी भी रूप में देखा जाए परंतु भारत जैसे विशाल व विविधतापूर्ण देश में क्षेत्रवाद और उप–क्षेत्रीयतावाद (Sub-Regionalism) से बचा नहीं जा सकता। इन दोनों क्षेत्रवादों का अस्तित्व न केवल मूल राष्ट्रीय मनोभावों की अभिव्यक्ति के लिए महत्त्वपूर्ण है, अपितु राष्ट्रीय राज्य की स्थापना के कारण यह अस्तित्व तर्क पूर्वक पैदा होता है। अत: संघवाद की अवधारणा के लिए क्षेत्रवाद और उपक्षेत्रवाद से बढ़कर कुछ भी हो, मौलिक नहीं है।

भारत में क्षेत्रवाद के दुष्परिणाम (Consequence of Regionalism in India)

क्षेत्रवाद के महत्त्व के संदर्भ में उपरोक्त विश्लेषण के बावजूद भारत में क्षेत्रवाद की उभरती प्रवृत्ति ने कई तरह के दुष्परिणामों को उत्पन्न किया है, जैसे:–

1. विभिन्न क्षेत्रों के लोगों के बीच संघर्ष एवं तनाव (असम एवं गैर-असमियों के बीच, झारखंडी एवं दिकुओं के बीच) से जहाँ एक ओर कानून एवं व्यवस्था की समस्या उत्पन्न होती है वहीं संविधान द्वारा प्रदत्त नागरिक स्वतंत्रता का भी हनन होता है।
2. राज्य तथा केंद्र सरकार के बीच तनाव बढ़ जाता है क्योंकि जहाँ राज्य सरकार क्षेत्रीय हितों से निर्देशित होती है वहीं केंद्र सरकार को व्यापक राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखना पड़ता है।
3. क्षेत्रवाद राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया में बाधा पहुँचाता है। यह क्षेत्रीय मुद्दों को उभारकर वहाँ के लोगों को राष्ट्रीय मुद्दों के प्रति उदासीन बना देता है।
4. यह आर्थिक विकास में बाधक बन जाता है क्योंकि क्षेत्रीय हितों में ही उलझे रहने के कारण लोग राष्ट्रीय आर्थिक विकास एवं आधुनिकीकरण (Modernization) की प्रक्रिया से कट जाते हैं साथ ही, संघर्षों में संसाधनों का अपव्यय करते हैं।
5. क्षेत्रवाद के कारण लोग राष्ट्र की शक्ति को चुनौती देते हैं, जिससे राष्ट्रीय सुरक्षा पर भी खतरा पैदा हो जाता है।

भारत में क्षेत्रवाद के कारण (Causes of Regionalism in India)

भारत एक बहुलक समाज है तथा भौगोलिक एवं सांस्कृतिक विविधता (Geographical and Cultural Diversity) इसका आवश्यक पक्ष है जो अन्य तत्वों के साथ जुड़कर क्षेत्रवाद की समस्या को उत्पन्न करता रहा है। वे अन्य तत्त्व ही मूलत: क्षेत्रवाद के कारण हैं जिन्हें निम्न बिंदुओं के अंतर्गत देखा जा सकता है:–

1. क्षेत्रीय आर्थिक विषमता, जो भौगोलिक विविधता या त्रुटिपूर्ण नीतियों का परिणाम रही है, पिछड़े एवं गरीब क्षेत्र के लोगों में क्षेत्रीय वंचन (Regional Deprivation) को उत्पन्न किया है।
2. विरोधी आर्थिक एवं राजनीतिक हितों के चलते जो आर्थिक एवं राजनीतिक विषमता के बोध उत्पन्न हुए हैं, ने भी लोगों में क्षेत्रवाद की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया है।
3. मुख्यत: केंद्र सरकार द्वारा विकास कार्यक्रमों में अपनाई गई नीतियों के कारण असमान विकास से प्रभावित लोगों में असंतोष उभरा है।
4. भारतीय राजनीति में कुछ राजनीतिक दलों या संगठनों या नेतृत्व के निहित स्वार्थ भी नृजातीय समूह को वोट बैंक के रूप में इस्तेमाल करने के लिए क्षेत्रवाद को बढ़ावा देते रहे हैं।
5. अनेक समूहों द्वारा राज्य की कुछ नीतियों को अपने सांस्कृतिक क्षरण एवं अपने नृजातीय छवि के प्रतिकूल मानते हुए क्षेत्रीयता के आधार पर संगठित रूप से उसका विरोध किया जाता है।
6. विदेशों द्वारा अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए भी क्षेत्रवाद को उद्वेलित किया जाता है। (उत्तर-पूर्व के राज्यों में)
7. वैश्वीकरण (Globalization) के कारण उत्पन्न पहचान के संकट ने भी विभिन्न क्षेत्रों के लोगों को अपनी नृजातीय विशेषताओं (Racial Characteristics) के आधार पर संगठित होने के लिए उत्प्रेरित किया है, जिसका दुष्परिणाम क्षेत्रवाद के रूप में सामने आया है।
8. इसके अलावा अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी आदि तत्त्व भी उपरोक्त तत्त्वों के साथ जुड़कर भारत में क्षेत्रवाद को जन्म देने में सहायक रहे हैं।

मूल्यांकन (Evaluation)

स्पष्ट है कि क्षेत्रवाद एक सीमा तक भारत जैसे बहुलक समाज में राष्ट्रीय एकता एवं संतुलित विकास हेतु अपरिहार्य हैं क्योंकि इसके द्वारा न केवल संतुलित विकास संभव होता है बल्कि राष्ट्र में केंद्रीकरण की प्रवृत्ति भी कम होती है और सत्ता केंद्र से प्रदेशों की तरफ विकेंद्रित हो जाती है। परंतु जब क्षेत्रवाद अपने नकारात्मक संदर्भ में प्रकट होने लगता है तो यह कई रूपों में राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता के समक्ष चुनौती को प्रस्तुत करता है, जिसे समकालीन भारतीय समाज (Contemporary Indian Society) में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। अत: जरूरत है इस समस्या के पूर्ण उन्मूलन की जिसको कुछेक सुझावों पर अमल करके संभव बनाया जा सकता है, ताकि क्षेत्रवाद की समस्याओं को दूर कर विविधता में एकता को सुरक्षित रखा जा सके और भारत के सामाजिक-आर्थिक विकास को सुनिश्चित किया जा सके:–

क्षेत्रवाद की समस्या की रोकथाम हेतु सुझाव (Suggestion to Prevent the Problem of Regionalism)

1. राष्ट्रवाद या हम सब एक है-की भावना को विकसित किया जाए।

2. वैयक्तिक एवं क्षेत्रीय दोनों स्तरों पर आर्थिक असमानता को दूर किया जाये।
3. आर्थिक विकास को सुदृढ़ किया जाये तथा गरीबी और बेरोजगारी का उन्मूलन किया जाये।
4. शिक्षा का अधिक से अधिक प्रसार किया जाये।
5. स्वार्थी राजनीतिक दलों एवं संगठनों एवं व्यक्तियों पर प्रतिबंध लगाया जाये।
6. वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में विभिन्न क्षेत्रीय संस्कृतियों के मध्य पारस्परिक आदान-प्रदान (Mutual Exchange) को तेज करके एक सामान्य भारतीय संस्कृति का निर्माण किया जाए, जिसमें भारत के सभी क्षेत्रों एवं विशिष्ट सांस्कृतिक तत्त्वों का समावेश हो ताकि सभी क्षेत्र एवं संस्कृति के लोगों में इस सांस्कृतिक समानता के आधार पर सामुदायिक भावना विकसित हो सके।
7. संचार साधनों (मीडिया) की भूमिका को इस दिशा में सकारात्मक रूप से सुनिश्चित किया जाए।